www.aureoleonline.in, ISSN: 2249 - 7862 (Print): 2455-877X(online)
Aureole, Vol. VIII, December 2016 PP 15-18

शिकंजे का दर्द - दलित जीवन की करुण कथा

* डॉ. मेरली के. पुन्नूस्

सारांश

सुशीला टाकभौरे ने अपनी आत्मकथा में अपने जीवन के साथ-साथ संपूर्ण दलित जीवन को समेटने का कार्य किया है। दलित एवं स्त्री होने के नाते उनका संघर्ष दोहरा रहा है। समाज में अपनी एक पहचान स्थापित करने केलिए उन्हें कड़ा संघर्ष करना पड़ा है। लेखिका के अनुसार घर के बाहर और भीतर, समाज में शिकंजे ही शिकंजे है। लेखिका ने इस शिकंजे को तोड़ने का कार्य किया है। इस कार्य से लेखिका लहुलूहान भी हुई है। लेखिका ने समाज के दंश को परास्त किया है। एक अध्यापिका, सामाजिक कार्यकर्ता और लेखिका के रूप में वे कार्यरत हैं। उनका लेखन उनके इस प्रतिरोध की ही अभिव्यक्ति करता है।

* *विभागाध्यक्ष, सेंट स्टीफन्स कॉलेज, उष़वूर, E-mail: merlykpunnose@gmail.com*

तोते की मौत हो गई। बड़े दुःख के साथ उसका मृत्यु संस्कार करके पानी में बहाया। तोते से इतना प्यार करने वाले ये इनके साथ बदसलूकी से पेश आते। लेखिका की माँ के शब्दों में - "वे इतनी छुआछूत करे हैं कि, हमारी छाँह से भी दूर रहे हैं। वे का किसी मज़दूर, भिखारी का बच्चा गोद लेते? इतनी पूजा-पाठ करे हैं; मगर हमको कभी इनसान नही समझें।"[4] इनके अलावा निम्नजाति के लोग भी इनसे भेद-भाव बरता करते थे। तेलन दूर से ही इन्हें तेल दिया करती थी, मालिक के नौकर तक इनसे दूरी बरतते। फूलचन्द सेठ की दूकान से सामान दूर से ही टोकरे में फेंककर दिया जाता था। लेखिका की माँ के बीमार होने पर डॉक्टर उनके घर आने को तैयार नहीं होते। नानी के बहुत गिडगिडाने पर वे आते हैं और बरामदे से ही बिस्तर पर सोई हुई माँ को देखकर दवाई लिख देते हैं। ये इनके जीवन का ऐसा सच था जिसे लेखिका को कदम-कदम पर झेलना पड़ता है। स्कूल की कक्षा में बैठने केलिए इनके लिए एक निश्चित जगह हुआ करता है। कक्षा की लड़कियाँ जो स्कूल में सामान्य ढंग से बातें किया करती हैं वे ही लेखिका के घर आने पर एक दूरी बनाये रखती है। कॉलेज की प्राध्यापिका का पद हासिल कर लेनें पर भी लेखिका को अपने सहयोगी मित्रों द्वारा जाति-भेद का दंश सहना पड़ता है। लेखिका द्वारा अपनी सहयोगी प्राध्यापिकाओं को घर पर खाने का निमंत्रण दिया गया। तेरह प्राध्यापिकाओं में से केवल तीन ही आई। जब खाने का समय हुआ तब महाराष्ट्रियन ब्राह्मण मैडम ने कहा कि उनका व्रत है। जब कि अब तक उन्होंने बातों में भी इसका जिक्र नहीं किया था- "मेरा मन कड़वाहट से भर गया था। दूसरों के दिखावे की परतों के पीछे उनके मन की सिलवटें नजर आ रही थीं। उस दिन मैंने समझ लिया था, अपने घर बुलाकर वे अपनी महानता का भाव व्यक्त करती थीं। मगर हृदय में समानता का भाव नहीं था। अपने इस ऊपरी भाव को वे समरसता का भाव बताकर महानता को ओढ़ रही थीं। हम क्यों इस तरह बेवकूफ बन जाते हैं? मुझे अफसोस हुआ था। बहुत व्यथा होती है, अपनी यह स्थिति देख-समझकर।"[5] इसी प्रकार कॉलेज में सवर्ण सुपरवाइजर हरदम झूठा आरोप लगाकर उन्हें परेशान किया करते थे। कचरा जमा करनेवाला डुमार जाति का सफाई कर्मचारी टाकभौरे का कचरा देखकर भुनभुनाते हुए जल्दी से कचरागाड़ी आगे बढ़ा देता था। किराए का मकान लेते समय भी उनकी जाति आडे आती है। कई शर्तों के बाद कामरेड महेन्द्र की पत्नी उन्हें अपना मकान किराये पर देने को तैयार होती है। लेकिन लेखिका ने कभी भी अपनी जाति नहीं छुपाई और पडोसिनों द्वारा अपमानित की गई।

सवर्णों द्वारा अपने वर्चस्व को बनाये रखने केलिए दलितों को डरा - धमकाकर, भयभीत रखने की सजिश ज़ारी है, ताकि वे कभी भी अपने हालात से उभरने का प्रयास न कर सके। इसी का शिकार लेखिका के बड़े दो भाईयों को होना पड़ा। उन्होंने परंपरा को तोड़ने की जुर्रत की थी। उन्होंने कॉलेज में होनेवाले अत्याचारों के विरुद्ध संघर्ष किया था। परेशान करनेवाले सवर्ण लड़कों को पीटने के कारण उन्हें अपने भविष्य से हाथ धोना पड़ा था। पढ़ाई छोड़कर मज़दूरी करनी पड़ी थी। यही हाल मालती का हुआ था। वह लेखिका से उम्र में डेढ़ साल छोटी थी, लेकिन निडर और साहसी थी। उसने गाडरी मोहल्ले में बकरीवाली के कुएँ पर चढ़कर बाल्टी से कुएँ का पानी खींचकर पीने की हिम्मत की थी। इसका नतीजा यह हुआ कि वह आठवीं से आगे पढ़ नहीं सकी। उसे हमेशा केलिए खामोश कर दिया गया। इस प्रकार उन्हें डरा-धमकाकर भयभीत रखने में ही सवर्ण अपनी हतिश्री माना करते थे। बात-बात पर इन्हें पीटा जाता है। उनके वर्चस्व को समाज में प्रतिष्ठित करने का कार्य ही धर्म एवं कानून द्वारा किया गया - "वैसे धर्म के नाम पर क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ब्राह्मणों की उच्चता की रक्षा करते रहे हैं, तभी वे सर्वोच्च बने रह सके हैं। तब मैं ये बातें नहीं जानती थी। स्कूल की पाठ्य पुस्तकों की शिक्षा और हिन्दी फिल्मों का प्रभाव हमें हिन्दू धर्म के प्रति अधिक आस्थावान बनाते थे। इससे अलग लोग सोच ही नहीं पाते थे।"[6] उनमें हीन भावना पैदा की जाती रही है। कई ढोंगी बाबा द्वारा अज्ञानता के गर्त में डूबे दलितों